

# सटक सीताराम

129



८१७  
संसा/स

प्रो० संसारचन्द्र एम० ए०

# सटक सीताराम

डा० धीरेन्द्र वर्मा पुस्तक-संग्रह

लेखक

प्रो० संसारचन्द्र एम० ए०

ऑरिएण्टल बुक डिपो

१७०४, नई सड़क, दिल्ली ।

प्रकाशक

ओरिएण्टल बुक डिपो

१७०४, नई सड़क, दिल्ली

मूल्य : तीन रुपये

मुद्रक

हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस

कवीरस रोड, दिल्ली



स  
ट  
क  
सी  
ता  
रा  
म

2000

1

2

3

4

5

6

7

8

9

10

11

12

13

14

15

16

17

18

19

20

21

22

23

24

25

26

27

28

29

30

31

32

33

34

35

36

37

38

39

40

41

42

43

44

45

46

47

48

49

50

51

52

53

54

55

56

57

58

59

60

61

62

63

64

65

66

67

68

69

70

71

72

73

74

75

76

77

78

79

80

81

82

83

84

85

86

87

88

89

90

91

92

93

94

95

96

97

98

99

100

101

102

103

104

105

106

107

108

109

110

111

112

113

114

115

116

117

118

119

120

121

122

123

124

125

126

127

128

129

130

131

132

133

134

135

136

137

138

139

140

141

142

143

144

145

146

147

148

149

150

151

152

153

154

155

156

157

158

159

160

161

162

163

164

165

166

167

168

169

170

171

172

173

174

175

176

177

178

179

180

181

182

183

184

185

186

187

188

189

190

191

192

193

194

195

196

197

198

199

200

201

202

203

204

205

206

207

208

209

210

211

212

213

214

215

216

217

218

219

220

221

222

223

224

225

226

227

228

229

230

231

232

233

234

235

236

237

238

239

240

241

242

243

244

245

246

247

248

249

250

251

252

253

254

255

256

257

258

259

260

261

262

263

264

265

266

267

268

269

270

271

272

273

274

275

276

277

278

279

280

281

282

283

284

285

286

287

288

289

290

291

292

293

294

295

296

297

298

299

300

301

302

303

304

305

306

307

308

309

310

311

312

313

314

315

316

317

318

319

320

321

322

323

324

325

326

327

328

329

330

331

332

333

334

335

336

337

338

339

340

341

342

343

344

## दो शब्द

हास्य क्या है ? मजाक किसे कहते हैं ? इस सम्बन्ध में प्रायः मतभेद पाया जाता है । एक वर्ग की मान्यता है कि रचना में हास्य अथवा मजाक का निर्वाह एक सामान्य कला है । साहित्यिकों की अधिकांश संख्या इससे सहमत नहीं । इनका विश्वास है कि मजाक करना मजाक नहीं है । कौन जाने किसका दृष्टिकोण पूर्णतया संगत है और किसकी धारणा भ्रान्त अथवा निर्मूल है । मैं तो इतना जानता हूँ कि मजाक वास्तव में एक दोधारी तलवार है । यदि इसका निशाना चूक जाय तो मजाक करनेवाला स्वयं मजाक का पात्र बन जाता है ।

यह प्रश्न विचारणीय है कि किसी रचना में हास्य एवं व्यंग्य का उद्देश्य करने के लिए किन-किन साधनों की आवश्यकता होती है । इसके लिए किस प्रकार का वातावरण तथा परिस्थितियाँ अपेक्षित हैं ? लेखक की साहित्यसाधना का स्तर कैसा होना चाहिये ? इन सब बातों का संतुलित विवेचन अत्यन्त विशद एवं गम्भीर है । सामान्य रूप से जैसा कि मैं समझ सका हूँ, ऐसे लेखक के लिए शान्त मन, स्वस्थ दिमाग तथा अच्छे हाजमों की आवश्यकता होती है । जहाँ तक मेरा वैयक्तिक सम्बन्ध है, पहली दोनों चीजें तो पश्चिमी पंजाब में ही छोड़ आया हूँ । हाजमों का होलिया यहाँ आकर बिगड़ गया है । भला इस मिला-जटा के दौर में हाजमा ठीक भी कैसे रह सकता है ! ढूँढ़ने पर

भी कोई चीज अपने शुद्ध रूप में नहीं मिलती । दूध को ही लीजिये । हमारे यहाँ दूध को सबसे सात्विक एवं पवित्र माना जाता है । खेद है कि आजकल बाज़ार में जो दूध विकता है, उसको दूध कहना दूध का मुँह चिढ़ाना है । चूल्हे में लकड़ियों के साथ स्वयं हलवाई भी यदि भस्म हो जाय, तो भी इस पर मलाई नहीं जमती । मैं तो भूले से भी इसका सेवन नहीं करता । यदि कभी ऐसा अपराध कर भी लूँ, तो मेदे और दूध में भयानक युद्ध प्रारम्भ हो जाता है । दूध अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर मेदे से जगह बनाना चाहता है और मेदा इसे सर्वथा आगन्तुक एवं विषम पदार्थ समझकर बाहर फेंकने का प्रयत्न करता है । इन दोनों की कशमकश में मेरी नाक में दम हो जाता है और मैं पेट पकड़कर बैठ जाता हूँ ।

ऐसे निराश वातावरण में मैंने हास्य-विनोदात्मक निबन्ध लिखने का साहस किया है । इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दी में निबन्ध-साहित्य का विशेष महत्त्व है, परन्तु इस प्रकार के निबन्धों का बहुत कम प्रचलन है । हमारा निबन्ध-साहित्य निर्बन्धन होकर परिबन्ध है । इसमें बौद्धिक पक्ष को ही प्रधानता मिलती है । साहित्य का यह माध्यम प्रायः कल्पनातत्त्वों के समुचित विकास के लिए उर्वर नहीं समझा जाता । यही कारण है कि ऐसा साहित्य केवल ज्ञान-पिपासा को शान्त करने के लिए तथा चिन्तन एवं अनुभूति को उत्तेजित करने के लिए ही उपादेय होता है । इसमें हृदय की मृदुल तारों को भ्रूंकृत करने की अधिक स्फूर्ति नहीं होती । इसीलिए इसका अधिकांश उपयोग विद्वानों तक ही सीमित रहता है । इससे जनसाधारण की रुचि का यथेष्ट

परिष्कार सम्भव नहीं होता । आजकल तो अधिकांश निबन्ध-साहित्य आलोचना का ही सहायक बनकर रह गया है । वस्तुतः इससे निबन्ध-साहित्य की व्यापकता को आघात पहुँचता है । इसमें सन्देह नहीं कि भारतेन्दुयुग में निबन्ध के वर्तमान स्वरूप का एकान्तिक अभाव था । उन निबन्धों में हृदयपक्ष की सजीवता एवं सरसता स्थान-स्थान पर झलकती है । द्विवेदी काल में भी निबन्ध का स्वरूप इतना गंभीर नहीं हुआ । आचार्य शुक्ल के समय से तो यह साहित्य इतना सारगर्भित एवं पांडित्यपूर्ण हो चला है कि इसमें मनोविनोद एवं जिन्दादिली के लिए बहुत कम अवकाश है । अब कुछ साहित्यिकों का ध्यान व्यंग्यात्मक निबन्धों की ओर अग्रसर हो रहा है जिनमें प्रभाकर माचवे, यशपाल तथा नामवरसिंह आदि के नाम उल्लेखनीय हैं ।

यदि देखा जाय तो हास्यविनोद मनुष्य की सहज वृत्ति है । जीवन के व्यस्त कार्यव्यापार से ऊब जाने पर उसे घड़ी दो घड़ी इसी मजाक की भी इच्छा होती है । हास्यविनोद से शून्य जीवन सर्वथा रुक्ष एवं निष्प्राण सा रह जाता है । इसीलिए साहित्य में भी हास्यविनोद के तत्त्वों का समावेश नितान्त अपेक्षित है । किसी भी देश एवं काल का साहित्य इसके बिना अधूरा है । ऋग्वेद जैसे प्राचीनतम ग्रन्थ में भी कहीं-कहीं सरल हास्य की मृदुल हिलोरें हृदय को झकझोर देती हैं । एक स्थान पर तो वेदपाठ करने वाले ब्रह्मचारियों को बरसाती मेंढक कहकर उनकी खूब खिल्ली उड़ाई गई है । अतः यह निर्विवाद है कि एक उत्कृष्ट साहित्यकार जहाँ मानव-हृदय में गहरी टीस उत्पन्न कर देता है,



वहाँ वह व्यंग्य एवं विनोद के छोटे बरसाकर हँसी में लोटपोट कर देना भी भलीभाँति जानता है ।

इन्हीं विचारों ने लेखक को इस पुस्तक की रचना के लिए प्रेरित एवं बाध्य किया है । वस्तुतः ये निबन्ध मेरे जीवन के अवकाशनों की देन हैं । इनके विषयों का चयन सामान्य जीवन से ही हुआ है । इनमें मयासंभव हास्य एवं विनोद की सामग्री जुटाने का प्रयास मिलेगा । जीवन के अनेक पहलुओं अथवा कार्यव्यापारों पर कहीं-कहीं चोट अथवा नज़र का उपक्रम भी मिलेगा परन्तु लेखक की यह प्रवृत्ति किसी प्रकार के पक्षपात एवं अश्वि की प्रतिक्रिया नहीं है । उसका मुख्य उद्देश्य तो पाठक के मन में केवल गुदगुदी-सी पैदा करना एवं थोड़ी देर के लिए उसे जीवन के गम्भीर वातावरण से तटस्थ करना है । स्मरण रहे कि इस पुस्तक की सभी घटनाएँ एवं स्थल वा पात्र काल्पनिक हैं जो कुछ भी कित्ती के सम्बन्ध में लिखा गया है, उसमें मेरा कोई 'मोटिव' नहीं है । यह तो मेरे धूमिल विचारों का अनर्गल प्रवाहसाव ही समझना चाहिये । विरकाल से इन विखरे हुए मनोवेगों को मूर्त रूप देने की लालसा रह-रहकर बलवती होती थी जिसका सक्रिय परिणाम पुस्तकाकार हो रहा है । इस सम्बन्ध में मुझे श्री देवीदास जी से विशेष प्रेरणा मिलती रही जिसके लिये उनका आभार मानता हूँ । प्रकाशक महोदय श्री सन्त साहिव ने भी पुस्तक के प्रकाशन में सुरक्षित एवं लगन का परिचय दिया है, इसलिए उनका भी धन्यवाद करता हूँ । अन्त में इस लघु प्रयास को विज्ञ पाठकों के

( ६ )

औदार्य तथा सहानुभूति पर छोड़ते हुए महाकवि कालिदास के शब्दों में ही अपने कथन की इतिश्री करता हूँ—

“परिहास विजल्पितं सखे परमार्थेन न गृह्यतां वचः ।”

वसंत पंचमी, १९५८

संसारचन्द्र

अम्बाला छावनी



## विषय-सूची

१. सटक सीताराम	१
२. स्कूल खोलिए	१३
३. सुनाइए क्या हाल है ?	२३
४. नराणां नापितो धूर्तः	३३
५. अम्बाला	४१
६. मकान	४६
७. भोजन	५६
८. बिजली का पट्टा	६६
९. श्रीमती जी	७६
१०. फिल्मची और फिल्म स्टार	८६
११. शराव की वोटल	१०१
१२. भैंस	११३
१३. चाय	१२३
१४. भूख हड़ताल	१३१
१५. भय का राज्य	१३६
१६. शादी एजेंसी	१४६
१७. लाल भुजकड़	१५६



सटक सीताराम

